Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
July to September 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LV (55), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

संस्कृति बोध साहित्य

डॉ. मनीषा सिंह मरकाम*

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस श्री अटल बिहारी वाजपेयी, शा. कला एवं वाणिज्य महा., इन्दौर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – हम इस दृष्यमान संसार को इतना ध्यानस्थ होकर देखते है कि अदृष्य ब्रह्मांड जो हमारे अंदर ध्वानित हो रहा है उसे हम नही देख पाते। हमारे अंदर साधना करने के बावजूद भी जो काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, माया, अहंकार है क्या हम उसे पराजित कर पा रहे है? हमारी साधना केवल हमारे लिए नही प्रत्येक कण, गण प्रण, प्राणी और प्राण की साधक है। यदि हम कृष्ण के दास है और श्रील प्रभुपाद की सच्ची सेवा करना चाहते है तो समरसता सद्भाव और सामंजस्य सिर्फ स्वयं के हित के लिए नही परहित के लिए आवश्यक है और यही धर्म है। शास्त्र हमें धर्म के अनुसार आचरण करना सिखाता है, वही उचित है। अनैतिक आचरण सम्पूर्ण समाज को पतन की गर्त में डाल देता है।

शब्द कुन्जी– दृष्यमान, प्रच्छन्न,भावपूर्ण, आलोकिक, वसीभूत, वैराग्य।

प्रस्तावना – श्री हरि के जय और विजय दो प्यारे द्वारपाल है। दोनों भाईयों ने ब्राह्मण सनकादि से श्राप के कारण असुरों का तामसी शरीर पाया। एक का नाम था हिरण्यकश्यपु और दूसरे का हिरण्याक्ष ये दोनों देवराज इन्द्र को युद्ध में परास्त करके विख्यात हुए।

किसी भी शक्ति का यदि गलत उपयोग किया जाता है तो वह धीरे–धीरे अपने कर्मो के कारण स्वत: ही क्षत–विक्षत होने लगती है। जैसा कि हम देख रहे है कि अमेरिका को हम सब विश्व की महान शक्ति मानते है इसमें कोई दोमत नही कि वह टेक्नोलॉजी में सबसे आगे है पर शक्ति के गलत उपयोग के कारण आज उनके ही देश में ट्रम्प महोदय का सबसे तीव्र विरोध हो रहा है। जैसा कि हम जानते है कि हिरण्याक्ष को भगवान ने वराह का शरीर धारण करके मारा और हिरण्यकश्यपु को नरसिंह रूप धारण करके वध किया।

कभी–कभी पापों का घड़ा इतना ज्यादा भरा होता है कि वह एक जन्म में भी समाप्त नही होता। हमें पता है कि हमने भी यह शरीर कई योनियों के बाद प्राप्त किया। हिरण्यकश्यपु और हिरण्याक्ष के साथ भी आगे जाकर यही हुआ। वे आगे जाकर देवताओं को जीतने वाले योद्धा रावण और कुम्भकर्ण नामक बलिष्ठ महावीर राक्षस हुए। भगवान द्वारा मारे जाने पर भी हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यपु इसलिए मुक्त नही हुए क्यो कि ब्राह्मण का श्राप तीन जनमों के लिए था।

एक समय की बात है सभी देवता जलन्धर दैत्य से युद्ध में हार जाने के कारण दुखी थे। सभी देवता भगवान शिवजी के पास गए। शिवजी ने भी दैत्य जलन्धर से घोर युद्ध किया। पर वह महाबली दैत्य मारे नही मरता था। इसके पीछे उसकी गुणी, मेधावी, प्रज्ञावान और पतिव्रता स्त्री थी। उसी के प्रताप के कारण शिवजी उस दैत्य का विनाश नही कर पा रहे थे। कोई व्यक्ति कितना भी सम्पन्न हो किन्तु यदि वह धर्मपूर्वक आचरण नही करता तो शक्तिमान होने के बावजूद भी वह संसार में संतोष का कारण नही संसार के संताप का करण बनता है। हम जानते है कि सत, रज, तम की अनुपातिक संगति सुजन का घोष करती है परन्तु इनके बीच उत्पन्न होने वाली विसंगति विध्वंस की घोषणा करती है।

सभी देवताओं ने विश्व कल्याण के लिए श्री हरि से प्रार्थना की प्रभु ने सबके उत्थान के लिए उस स्त्री का व्रत भंग कर देवताओं का काम किया। जब उस स्त्री को इस बात का पता चला तो उसने भगवान को श्राप दिया। कृपालु भगवान श्री हरि ने हम सबकों यह संदेश देना चाहा कि इस जगत में जो कुछ भी है उसकी अपनी उपयोगिता है। हम बस किसी भी प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष ध्येय की पूर्ति का साधन मात्र है। श्री हरि ने अपनी इस लीला के माध्यम से हमें यह समझाने का प्रयास किया कि हम सभी एक बड़ी व्यवस्था के छोटे – छोटे अंग है, किन्तु अपनी शक्ति के मद में हम स्वयं को ही व्यवस्था और व्यवस्थापक समझने की भूल कर बैठते है। वही जलन्धर एक कल्प में रावण हुआ। सत्य के साथ हमेशा जीवन में एक सापेक्ष सत्य चलता है और कोई भी मनुष्य उससे अछूता नही रह सकता।

वर्तमान में बहुतायत से यह देखा जा रहा है कि सत्ता के मद में इंसान सब कुछ भूलता जा रहा है यह हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि अहंकार रावण का भी नही रहा। यदि रावण को किसी ने मारा है तो उसके अहंकार ने। सत्ता की माया इतनी व्यापक है कि साधु प्रवृत्ति भी उससे बच नही पाती ईश्वरीय प्रवृत्ति ही मनुष्य को महान बना पाती है। हम राम और कृष्ण के वंशज है यह चरित्र भारतवासियों में विकसित होना चाहिए।

हमारे आदर्श वह होना चाहिए जो पहली गाली पर ही सर काटने की शक्ति रखने के वावजूद निनयानवे और गाली सुनने का सामर्थ्य रखते है, यह हमारी संस्कृति की वचन बद्धता का प्रतीक है। सुदर्शन जैसा शस्त्र होने के बाद भी यदि हाथ में मुरली धारण करते है यह भाईचारे की भावना है। द्वारिका का वैभव चरणों में होने के बावजूद भी सुदामा जैसे मित्र के प्रति प्रेम रखना। मृत्यु के फन पर मौजूद होने पर भी यदि नृत्य है तो यह त्याग का प्रतीक है। सर्वसामर्थ्य होने पर भी यदि सारथी बने है तो यह सत्य का अन्वेषण है। हम ऐसी संस्कृति को धारण करने वाले है हमें अपनी संस्कृति पर गर्व होना चाहिए।

हमारी संस्कृति में गुरू का विशेष स्थान है गुरू के मार्गदर्शन से ही हम अपने जीवन पथ पर अग्रसर होते है। गुरू ही हमें माया मोह से मुक्त होने का

साधन सुझाते है। संत कबीर कहते है–

'कबीर माया मोहिनी, जैसी मीठी खांड
सतगुरू की किरपा भई नही तो करती भांड'

प्रभु की माया इतनी विशाल है कि संत, ऋषि, मुनि भी इससे नही बच सके तो सामान्य मनुष्य की क्या विसात है सभी चर–अचर जीव माया के वशीभूत हो जाते है। महर्षि नारद भी एक बार माया के वशीभूत होकर अपना वैराग्य भूल गए। एक समय में महर्षि नारद भी एक राजकुमारी के अद्धितीय सौंदर्य को देखकर हृदय में बहुत हर्षित हुए और उसके वशीभूत हो गए। हम जानते है कि अप्रमाणिक अशंका प्रामाणिक शंका से कही अधिक घातक होती है, कभी –कभी शंका प्रत्यक्षीकरण के कारण भी होती है जो कि नारद जी को हुई। किन्तु आशंका को जन्म देने का कारण प्रच्छन्न (छिपा हुआ) भी होता है। वे आशंकाएँ ही होती है जो व्यक्ति की कर्मणा शाक्ति का क्षरण करती है और कार्मिक बंधनों में बॉधती चलती है जो महान मुनि नारद के साथ भी भगवान की लीला के माध्यम से हुआ किन्तु भगवान अपने शरणागतों की हमेषा चिंता करते रहते है यही कारण है कि जब भगवान ने अपनी माया को खींच लिया तब ना तो सौदर्य बचा और ना ही सुंदरी

'ये संगी दिन चारि कै, सुत दारा, धन, धाम'

साधनों में मुख्य रूप से सावधानी की आवश्यकता होती है। माया का प्रभाव ऐसा है कि यदि साधना सावधानी से ना की जाए तो ऐसी साधना के भी विस्मृत होने की पूरी–पूरी संभावना होती है। माया जब मतिभ्रम कर देती है तो भगवान की स्पष्ट वाणी भी समझ नही आती ।

ऐसा ही होता है हम सबके साथ जब हम भी माया के वशीभूत होते है तब ईश्वर की आलौकिक शक्तियों को नजरअंदाज कर देते है। हम इस दृष्यमान संसार को इतना ध्यानस्थ होकर देखते है कि अदृष्य ब्रह्मांड जो हमारे अंदर ध्वानित हो रहा है उसे हम नही देख पाते। हमारे अंदर साधना करने के बावजूद भी जो काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, माया, अहंकार है क्या हम उसे पराजित कर पा रहे है? हमारी साधना केवल हमारे लिए नही प्रत्येक कण, गण प्रण, प्राणी और प्राण की साधक है। यदि हम कृष्ण के दास है और श्रील प्रभुपाद की सच्ची सेवा करना चाहते है तो समरसता सद्भाव और सामंजस्य सिर्फ स्वयं के हित के लिए नही परहित के लिए आवश्यक है और यही धर्म है। हमें चाहिए कि हम अपनी साधना में सावधानी बरतते हुए अपने अंदर के असुर को निरस्त और निष्क्रिय करें यही हमारा नैतिक और सामाजिक कर्तव्य है। जब हम स्वयं का सुधार करेंगे तभी हम एक स्वस्थ समान को जीवित कर पाएँगे। धूमिल हो रही संस्कृति, स्वरूप बदल रही संस्कृति किसी भी तरह स्वस्थ समाज का निर्माण नही कर सकती यदि भारत को विश्वगुरू के स्तर तक पहुँचाना है तो हमें अपनी साधना से प्रभु का आशीर्वाद लेकर कुन्दन की तरह तपना होगा, इसके लिए प्रभु हमारी जितनी भी परीक्षा ले ..... देनी चाहिए। बगैर दोषारोपण किए।

नारद जी भी महान संत थे उनकी साधना अमिट थी किन्तु उन्हें भी राजा दक्ष ने श्राप दिया कि आप किसी भी एक जगह टिक नही पाएँगें। इसके पीछे कारण यह था कि दक्ष के दस हजार पुत्रों को नारद जी ने आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान किया जिसके फलस्वरूप वे सभी नारद जी से प्रभावित हुए और प्रभु के प्रति उनकी श्रृद्धा इतनी हो गई कि वे सभी वैराग्य धारण कर गए जबकि इसके पीछे का सापेक्ष सत्य कुछ और ही था पर नारद जी ने सम्मान पूर्वक राजा दक्ष के श्राप को सरमाथे लिया। सामान्यतया अच्छा कार्य करते हुए भी हाथ जल जाते है किन्तु यदि हम इसकी परवाह करते रहे तो समाज के लिए ओजस्वी और तेजस्वी कार्य करने की जिम्मेदारी कौन उठाएगा। समाज को आगे बढ़ाने का बीड़ा किसके कंधों पर होगा इन्ही सब बातों का ध्यान रखते हुए अपने देश हित में, संस्कृति हित में मिल जुलकर कार्य करने की अति आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रामचरित मानस – गोस्वामी तुलसी दास
2. श्री मद्भागवत महापुराण– ए. सी. भक्ति वेदांत स्वामी प्रभूपाद
3. महाभारत – पूर्णप्रज्ञ दास
4. दा किलिंग ऑफ हिरण्यकश्यपु – अनीता नायर

****